Journal Homepage: - www.journalijar.com

INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH (IJAR)

Article DOI: 10.21474/IJAR01/23039
DOI URL: http://dx.doi.org/10.21474/IJAR01/23039

ISSN (O): 2320-5407
ISSN (P): 3107-4928

CONFERENCE PAPER

सामवेद में संगीत

डॉ. निधि शर्मा

1. अतिथि संकाय (संगीत विभाग) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय] उदयपुर

Manuscript Info

Manuscript History
Received: 04 January 2026
Final Accepted: 08 February 2026
Published: March 2026

Abstract

वेद भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं। संस्कृति के सम्पूर्ण पक्षों का आदर्श रूप वेदों में निहित है। वेद भारतीय साहित्य के ही नहीं] अपितु मानवमात्र के इतिहास में इनसे बढकर किसी दूसरे प्राचीन ग्रन्थ की अभी तक उपलब्धी नहीं हुई है1। ऋक] यजु] साम] और अथर्व] भेद से वेद चार हैं। इन्हीं को संहिता भी कहते हैं। वेद सभी प्रकार के ज्ञान से युक्त हैं। वेदों के विषय में प्रमुख धर्मशास्त्री मनु ने कहा है।- वेदोऽखिलो धर्ममूलम्।2 अर्थात् वेद धर्म के मूल हैं। अतः वेद का अर्थ है दिव्य साक्षात्कार से प्राप्त ज्ञान । इस आधार पर ऋक] यजु] साम] और अथर्ववेद को मनीषियों ने ज्ञान का बागार कहा है। मानव-मात्र के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में संगीत विद्या के किन्चित प्रमाण प्राप्त होते हैं। परन्तु सामवेद में भारतीय शास्त्रीय संगीत का पूर्ण स्वरूप विशेष दर्शनीय है। छन्दोबद्ध मन्त्र ही ऋक् है।3 इन्हीं ऋचाओं पर गान निबद्ध है उन्हीं की साम संज्ञा है।4 प्राचीन संस्कृत वाङ्गय में संगीत की व्युत्पत्ति सम् उपर्सग पूर्वक गै धातु से मानी गई है। जिसमें सम् का अर्थ है सुचारू रूप से अथवा उचित प्रकार से और गै का अर्थ गाने से है5 अर्थात् "सम्यकप्रकारेणयद्गीयतेतत्संगीतम्" जो सभी प्रकार से अथवा सुचारू रूप से गाया जाए वह संगीत है। संगीतरत्नाकर में शारंगदेव ने संगीत को परिभाषित करते हुए लिखा है कि गीत] वाद्य] और नृत्य इन तीनों का समन्वित स्वरूप ही संगीत है।6 संगीतकला लौकिक एवं पारलौकिक दोनो सुखों को प्रदान करने वाली है। संगीतदर्पण के अनुसार - "घर्मार्थकाममोक्षाणामिदमिदमेवैकसाघनम्"।7

"© 2026 by the Author(s). Published by IJAR under CC BY 4.0. Unrestricted use allowed with credit to the author."

Corresponding Author:- डॉ. निधि शर्मा
Address:-अतिथि संकाय (संगीत विभाग) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय] उदयपुर

Introduction:-

अर्थात् विश्व के चार पुरूषार्थ धर्म] अर्थ] काम और मोक्ष है। इन सबकी प्राप्ति कराने वाला एकमात्र साधन "मोक्ष" है। सामवेद संहिता में इसके प्रमाणों को निम्नलिखित रूप में अभिव्यक्त किया जा सकता है।

सामवेद में संगीत:-

"सामानि यो वेत्ति स वेद तत्त्वम्।"

अर्थात् जो साम को जानता है] वह वेद के तत्त्व अथवा सार को जानता है। श्रीमद्भगवद्गीता में सामवेद को ईश्वर का अंश माना गया है- "वेदानांसामवेदोऽस्मि"8 भरत के नाट्यशास्त्र के अनुसार - "जग्राह सामभ्यो गीतमेव च"9] शाङ्र्गदेव ने भी संगीतरत्नाकर में कहा है कि "सामवेदादिदं गीतं सजग्राह पितमह" अर्थात् दोनों के मतानुसार ब्रह्मा ने संगीत की सृष्टि साम से की है।10 साम का शाब्दिक अर्थ है -"देवों को प्रसन्न करने वाला गान"। बृहदारण्यकोपनिषद् में साम शब्द की निरूक्ति इस प्रकार की गयी है-

"सा च अमश्चेति तत्साम्नः सामत्वम्।

सा ऋक् तथा सह सम्बन्धः अमो नाम स्वरो यत्र वर्तते] तत्साम।।"

अर्थात् "सा" और अम् से मिलकर साम बना है।"सा" का अर्थ है- ऋचा और "अम्" का अर्थ है-षडज] ऋषभ] गंधार आदि संगीत के सात स्वर ! इस प्रकार ऋग्वेद की ऋचाएँ जब सात स्वरों से मिलती हैं तो "साम" बनता है। अतः साम का अर्थ है- "ऋचा का स्वरयुक्त गेय पाठ"। ऐतरेय ब्राह्मण और बृहदारण्यकोपनिषद् में ऋक् और साम की इस घनिष्ठता को दाम्पम्य सम्बन्ध के द्वारा प्रकट किया गया है-

अमोऽहमस्मि सा त्वम् सामहमस्मि ऋक त्वम्।

ता विह सम्भवात्् प्रजामाजनयावहै।।11

अर्थात् यहाँ पति अपनी पत्नी का आवाहन करता हुआ और कहता है कि मै "साम" रूप पति हूँ और तुम ऋक् रूपा पत्नी हो आओ हम दोनो मिलकर प्रजा उत्पन्न करें। जैमिनीय सूत्र के अनुसार गीती के लिए ही साम संज्ञा है- "गीतिषु सामाख्या"12 अर्थात् जो मन्त्र गाये जाते हैं] वही साम कहलाते हैं। अतः साम का अर्थ है-ऋचाओं के आधार पर किया गया आलाप। इस प्रकार साम और ऋक् में घनिष्ठ सम्बन्ध दृष्टिगोचर होता है। जिन ऋचाओं को साम अपना आधार बनाता है] उनको साम योनि कहते हैं। इन्हीं ऋचाओं को साम का उत्पत्ति स्थान माना जाता है। छान्दोग्योपनिषद् के अनुसार -"या ऋक् तत् साम।"13 अर्थात् जो ऋक है वही साम है।वाणी और प्राण क्रमशः ऋक् और साम ही हैं।साम की विशेषता मन्त्रों अथवा पदों में नहीं है अपितु उसकी विशेषता गान अथवा स्वर में है। यज्ञ याग की वृद्धि के कारण उद्गाता नामक ऋत्विजों का एक स्वतन्त्र वर्ग बन गया जिनका कार्य ऋग्वेद् की ऋचाओं का शास्त्रीय एवं परम्परानुगत गायन करना था। इन्हीं ऋचाओं को एक स्थान पर संकलित करने से जो ग्रन्थ बना वही सामवेद के नाम से जाना गया।15 सामवेद के दो प्रधान भाग हैं- 1- आर्चिक तथा 2-

गान। आर्चिक भाग केवल ऋग्वेद् की ऋचाओं का संग्रह मात्र है।16 आर्चिक के दो भाग हैं- पूर्वार्चिक तथा उत्तरार्चिक। पुर्वार्चिक में छः अध्याय या प्रपाठक हैं। इनमें से प्रथम पाँच गेयपाठ अग्नि] इन्द्र पवमान आदि देवताओं की स्तुति परख है जोकि ग्रामगान के नाम से अभिहित हैं। केवल षष्ठ अध्याय "आरण्यगान" के अर्न्तगत आता है। इसके अतिरिक्त उत्तरार्चिक भाग में नो प्रपाठक हैं। पूर्वार्चिक तथा उत्तरार्चिक की रचना में अन्तर केवल यह है कि पूर्वार्चिक में सामों की केवल योनिभूत अर्थात् मूलभूत ऋचाएँ पठित हैं तथा उत्तरार्चिक में इन ऋचाओं की धुन पर गाये जाने वाली तृचों अथवा प्रगाथों का संग्रह हैं अर्थात् सामगान के अर्न्तगत गाये जाने वाले "स्तोत्रों" का निर्माण इन्हीं उत्तरार्चिक की ऋचाओं से होता रहा है। उत्तरार्चिक में इसी दृष्टि से चार सौ स्तोत्र संकलित हैं। एक स्तोत्र में तीन या चार ऋचाऐं होती हैं। इन सबको मिलाकर एक तृच या प्रगाथ बनता है। इन्हीं तृचों का गान साम के रूप में किया जाता है।17 डॉ0 पंकजमाला शर्मा के अनुसार तीन ऋचाओं से युक्त आवृतिमूलक जो सम्पूर्ण गान किया जाता है उसको स्तोम कहते हैं18 यहीं नहीं सामवेद के द्विविध ग्रन्थों में गान-ग्रन्थों का महत्वपूर्ण स्थान है। आर्चिक ग्रन्थ साम के साहित्य मात्र का संकेत करते है और गान ग्रन्थ साम के स्वरमय स्वरूप के द्योतक हैं। आर्चिक ग्रन्थों की आधुनिक परिभाषा में संगीत के ऐसे गीत ग्रन्थों से की जा सकती है जिनमें केवल स्वरविरहित चीजों का संकलन होता है। संगीत के इतिहास में सामवेद के इन्हीं ग्रन्थों का अधिक महत्व है। ये ग्रन्थ संख्या में चार हैं जिनमें से प्रथम दो योगिगान है] तथा परवर्ती दो विकृति-गान हैं। इनके नाम इस प्रकार है- 1- ग्रामगेयगान] 2- आरण्यक गान] 3- ऊहगान तथा 4- ऊह्यगान।19

ग्रामगेयगान को वेयगान या प्रकृतिगान के नाम से भी अभिहित किया जाता है।20 पं0 सत्यव्रत सामश्रमी के अनुसार यह "वेगान" कहलाता है अर्थात् आरण्यगान के अनन्तर सिखाऐ जाने के कारण इसको वेयगान कहा जाता है21। ग्राम-गान के अर्न्तगत पूर्वार्चिक के केवल प्रथम पाँच अध्यायों का समावेश है। इसमें गायत्र] ऐन्द्र] पवमान] आदि सूक्तों को ही मूलभूत सप्तगानों का अंगभूत माना जाता है।

आरण्यक गान का सम्बन्ध पूर्वार्चिक ग्रन्थ के षष्ठ अर्थात् अन्तिम अध्याय से है। साम के सप्त मूलभूत गानों में अर्कद्वन्द्वव्रत] शुक्रिय तथा महासाम्नी का अर्न्तभाव आरण्यक गान में होता रहा है। इसके लिए रहस्य या रहस्यगान भी संज्ञाएँ हैं। 22 ग्रामीण तथा नगर संगीत के मध्य में जो अन्तर अनुभूत है] उसी अन्तर की कल्पना वेयगान तथा आरण्यगान के बीच में की जा सकती है। इस प्रकार ग्रमगेय तथा आरण्यक दोनों प्रकृति-गान हैं। ऊह तथा ऊह्य नामक अन्य दो प्रकार के गान इन्हीं गानों पर आधारित होते हैं।23 तथा इन्हें योनिगान भी कहते हैं। सामगान में मुख्यरूप से तीन स्वरों का प्रयोग होता है। साम की आर्चिक संहिताग्रन्थों में मुख्यतः जिन स्वरों का प्रयोग होता है] वे उदात्त] अनुदात्त तथा स्वरित कहलाते है।24 वैदिककाल में मन्त्रों का गान इन्हीं स्वरों के आधार पर होता रहा है।इसके अतिरिक्त साम के सप्त स्वरों की उत्पत्ति इन्हीं स्वरों से मानी गयी है। यद्यपि सामगान में सम्पूर्ण स्वर सप्तक का उपयोग उपलब्ध है तथापि इसके मूल में उदात्तादि तीन स्वरों के होने की बात स्पष्ट है। उदात्तादि स्वरों की सत्ता वर्ण का उच्चारण किसी न किसी स्वर के साथ होता है। इसके अतिरिक्त उदात्तादि स्वरों की स्वर प्रधानता के सम्बन्ध में पाणिनि सूत्र 25 पर भाष्य करते हुए आचार्य कैयट उदात्तादि स्वरों का सामंजस्य षड्जादि स्वरों से स्थापित करते हैं। यही नहीं नारदीय] माण्डुकी तथा पाणिनि शिक्षा में षड्जादि सप्त स्वरों की उत्पत्ति उदात्तादि तीन स्वरों से मानी गयी है। यथा-

उदात्ते निषादगान्धारावनुदा ऋषभधैवतौ।
स्वरितप्रभवा ह्येते षडजमध्यमपंचमा ।।26

नारदीय शिक्षा के अनुसार स्वरों का विकास एक दो या तीन स्वरों से क्रमशः होता रहा हो अर्थात् एक स्वर से युक्त गान आर्चिक कहलाता है] दो स्वरों से युक्त गान गाथिक कहलाता है तथा तीन स्वरों से युक्त गान सामिक कहलाता है-

आर्चिकं गाथिकं चैव सामिकं च स्वरान्तश्म् ।
एकान्तरस्वरो ह्त्तु गाथासु हथन्तरं स्वरः।
सामसु त्र्यन्तरं विद्यादेतावत्स्वरतोऽन्तरम्।।27

इसके अतिरिक्त सामगान में प्रयुक्त सप्त स्वरों के निम्न अभिघान हैं प्रथम] द्वितीय] तृतीय] चतुर्थ] मन्द्र] कुष्ट एवं अतिस्वार।28 सामवेद के ब्राह्मण ग्रन्थों मे भी साम के सप्त स्वरों का उल्लेख प्राप्त होता है।29

निष्कर्षतः सामवेद का भारतीय प्राचीन संगीत की दृष्टि से एक विशिष्ट स्थान है। यही वह ग्रन्थ है जिसके रूप में भारतीय संगीत-सरिता के अनादि स्रोत का दृश्य स्वरूप हमारे समक्ष प्रथम बार अभिव्यक्त होता है यही कारण है कि श्रमद्भगवत गीता में सामवेद को ईश्वर का अंश मानकर भगवान श्रीकृष्ण ने स्वयं कहा है कि-

वेदानां सामवेदोऽस्मि 30

अर्थात् वेदों में सामवेद मै ही हूँ। साम हमारे जीवन का आधार है। साम-गान में उन समस्त तत्वों का बीज है] जिनका व्यवहार परवर्ती कालों में हुआ और वर्तमान काल में हो रहा है।

पाद टिप्पणी

1. आचार्य बलदेव उपाध्याय] भरतीय. दर्शन] पृ.सं. 27
2. आचार्य मनु] मनुस्मृति 12/97
3. तेषमृत्र् यत्रार्थवशेन पादव्यवस्था । जै.सू. 22/35
4. जै.सू. 2/2/36
5. डॉ. ईश्वरचन्द्र शर्मा] पारिजातकोश पृ-सं- 995

6. गीतं] वाद्यं] तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते। संगीतरत्नाकर 2/21
7. पं. दामोदर मिश्र] संगीतदर्पण] प्रथम अध्याय] श्लो. 29
8. श्रीमद्भ.गी. 8/30
9. ना. शा.- अध्याय- 1/1
10. ठाकुर जयदेवसिंह] भारतीय संगीत का इतिहास] पृ.सं.35
11. अथर्ववेद] 14/2/71] ऐतरेय ब्रा. 8/27] बृ.उ. 6/4/20
12. जैमिनीय मीमांसा सूत्र- 2/1/36
13. सामवेदभाष्य] सायण] भाग-1] पृ.सं.22
14. छान्दोग्यपनिषद] 1/3/4
15. डॉ. शरच्चन्द्र श्रीधर परांजपे] भरतीय संगीत का इतिहास] पृ.सं. 58
16. वैदिक साहित्य] बलदेव उपाघ्याय] पृ.सं. 65
17. डॉ. कर्णसिंह] वैदिक साहित्य का इतिहास] पृ.सं. 69
18. डॉ. पंकजमाला शर्मा] सामगान] उद्भव] व्यवहार एवं सिद्धान्त] पृ.सं. 29
19. डॉ. शरच्चन्द्र श्रीघर परांजपे] भरतीय संगीत का इतिहास] पृ.सं. 59
20. इति वेयगानं समाप्तम् केटेलॉग ऑफ संस्कृत मेनस्क्रिप्ट खण्ड-1]भग-1 पृ.सं.73 ट्र. सामश्रमी कृत त्रयीटीका] पृ.सं. 205 केटेलॉग ऑफ संस्कृत मैनस्क्रिप्ट खण्ड-1] भग-1 पृ.सं. 73 पंचविंश ब्राह्मण भूमिका पृ.सं. 11 सायमन कृत पुष्पसूत्र] पृ.सं. 501
21. डब्लू कैलेखण्ड कृत डाय जैमिनीय संहिता] पृ.सं. 10
22. डॉ. शरच्चन्द्र श्रीधर परांजपे] भरतीय संगीत का इतिहास] पृ.सं. 82
23. पाणिनीय शिक्षा- 3/1
24. ना.शि. 1/8,8
25. ना.शि. 1/1/2.3
26. पाणिनीय शिक्षा] 1/2/33.34 प्रौढ ब्राह्मण- 7/1/7 षड्विंश ब्रा. 1/1/4 साम. ब्रा. 8:30